• शैलकुमारी

द्रुपद और द्रोण



बच्चों की कहानियां

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगडों, जलन और बैर की वजह से हम कमज़ोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये ज़माने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमजोर और खतरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हक़ीक़त है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुक़ाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर ज़ोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैग़म्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज्ज़त की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफ़सोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमज़ोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की जरूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना जरूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और ज़िन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बडे–बडे संत–पैग़म्बरों की ज़िन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुडी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

द्रुपद और द्रोण

शैल कुमारी

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

ात्रकार :

ृादेव नारायण

० एम० शेणै (मुखपृष्ठ)

मूल्य :

दो रुपये

मुद्रक :

अकील दीवानजी

ऑनलुकर प्रेस

१६, सासुन डॉक

कोलाबा, बम्बई–४०० ००५

प्रकाशक :

वाडीलाल डगली

मानद मंत्री

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग

बम्बई–४०० ००२

एकमात्र विक्रेता

एस० चन्द एन्ड कंपनी लि०

मुख्य कार्यालय : रामनगर, नयी दिल्ली-११००५५

शो रूम : ४/१६-बी, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं :

अमीनाबाद पार्क, लखनऊ-२२६००१

२८५/जि, बिपिनबिहारी गांगुली स्ट्रीट,
कलकत्ता-७०००१२

सुल्तान बाजार, हैदराबाद-५००००१

३, गांधी सागर ईस्ट,
नागपुर-४४०००२

खजांची रोड, पटना-८००००४

माई हीरां गेट, जालन्धर-१४४००८

१५२, अन्ना सलाए, मद्रास-६००००२

ब्लैकी हाउस,
१०३/५, वालचन्द हीराचन्द मार्ग,
बम्बई-४००००१

के० पी० सी० सी० बिल्डिंग,
रेसकोर्स रोड, बंगलोर-५६०००६

६३१-७, महात्मा गांधी रोड,
एरनाकुलम, कोचीन-६८२०११

द्रुपद और द्रोण

रात की चौथी घड़ी है।

पेड़ों पर पक्षी चहचहाने लगे हैं।

द्रोण ने शंख उठाकर फूंका। यह आश्रमवासियों को उठकर तैयार हो जाने का संदेश था।

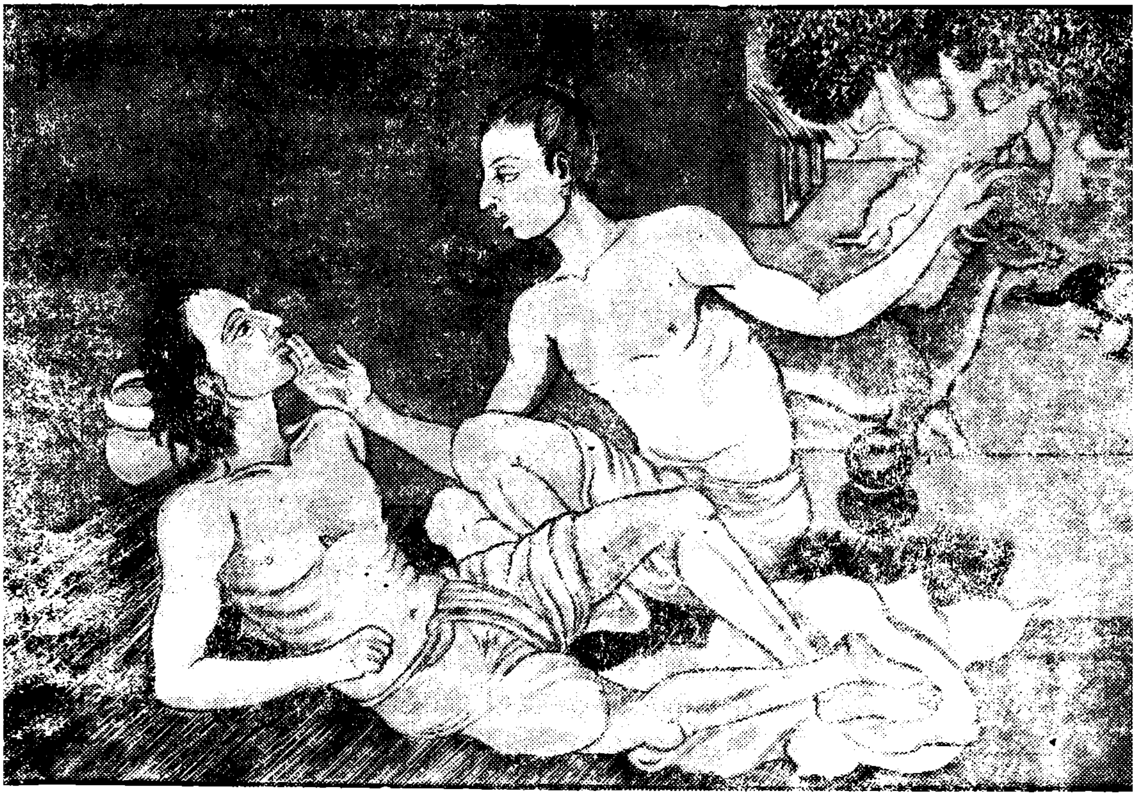
सारे आश्रमवासी उठकर तैयारी में लग गये।

द्रोण भी नहाने के लिए जाने लगा तो उसने देखा कि एक आश्रमवासी अभी तक सोया ही हुआ है।

जरूर ही यह द्रुपद होगा, ऐसा सोचते हुए द्रोण ने उसे उठाया, "राजकुमार, तुम अभी तक सोये ही हो? इस तरह तो तुम कभी समय पर हवन-यज्ञ में शामिल नहीं हो सकोगे और गुरु तुमसे नाराज होंगे। जल्दी उठ बैठो और अपने कपड़े ले लो। उधर ही नित्यक्रिया से निबट लेना।"

द्रुपद अलसाते हुए उठा।

उसने अंगड़ाई ली और कहा, "नींद अभी पूरी नहीं हुई। सच द्रोण, यहां तो बड़ा कष्ट है। पिताजी राजधानी में ही कोई गुरुकुल रखते तो सुविधा होती। मैं राजमहल से ही पढ़ने के समय वहां पहुंच जाता। ये लड़की इकट्ठी करना, हवन-यज्ञ में भाग लेना, भिक्षाटन को जाना यह सब बड़ा बेकार लगता है। भला कहो,



मैं हूं राजकुमार, भिक्षा मांगने जाना मुझे कैसे अच्छा लगेगा ?"

द्रोण हंस पड़े, "जब तक तुम गुरुकुल में हो, तुम्हें यहां के तरीके से ही चलना होगा। ब्रह्मचर्य आश्रम में तुम ब्रह्मचारी हो। राजपुत्र होते हुए भी तुम्हें इस धर्म का पालन करना होगा। तुम्हें मेरी वजह से जितनी छूट मिल जाती है, उससे ही दूसरे विद्यार्थी कुढ़ते हैं। गुरु को भी यह अच्छा नहीं लगता। पर मैं सोचता हूं कि यदि तुम धीरे-धीरे यहां की सारी चीजें सीख लेते हो, तो भविष्य के लिए अच्छा रहेगा। यही सोचकर मैं तुम्हारे साथ थोड़ी ढिलाई करता हूं।"

"इसलिए तो मैं यहां टिका हूं द्रोण! सच, तुम मेरे बड़े शुभचिंतक हो। देखना, मैं भी तुम्हारे लिए क्या करता हूं। मैंने मन-ही-मन निश्चय कर लिया है कि जब मैं राजा बनूंगा तो तुम्हें ऐसे नहीं रहने दूंगा। अपना आधा राज देकर तुम्हें भी

राजा बनाऊंगा। हम दोनों भाई मिलकर अपने-अपने राज्य की उन्नति करेंगे।"

"अरे भाई, इन बातों को इस तरह मत सोचो। हम तपस्वियों को राजकाज से दूर ही रहना होता है।" द्रोण ने कहा।

"नहीं, तुम देख लेना। तुम्हें बदलना होगा। मैंने जो कहा है उसे मैं पूरा करके रहूंगा।"

इस तरह बातें करते हुए द्रोण और द्रुपद तालाब के निकट पहुंचे और दिन भर की तैयारी में लग गये।

द्रोण, महर्षि भारद्वाज के पुत्र थे।

भारद्वाज अपने समय के बहुत बड़े विद्वान और स्वतंत्र विचार के गुरु थे। उन्होंने अपने आश्रम को किसी राजा की कृपा पर नहीं रखा था। इससे उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी न थी। बड़ी तक़लीफ में रहकर वे अपने आश्रम के छात्रों और परिवार का पालन करते थे।

पांचाल नरेश का पुत्र द्रुपद भी इसी आश्रम में शिक्षा लेने के लिए भेजा गया था। बचपन से ही विलासिता के वातावरण में रहने के कारण द्रुपद विलासी हो गया था। अपने राजकुमार होने का अहसास तो उसे कभी भूलता ही न था।

गुरु भारद्वाज उससे निराश थे, पर द्रोण के स्नेह के कारण वे उसे आश्रम से वापस भेजने का निश्चय नहीं कर पाते थे।

धीरे-धीरे द्रुपद आश्रम के कामों में लग तो गया, पर उसकी वाचालता समय के साथ खत्म न हुई। वह बढ़-चढ़कर बोलने का कोई अवसर चूकता न था।

गुरु-पूर्णिमा के उत्सव के समय द्रुपद ने गुरु के चरण छूकर अपने मन की अभिलाषा इन शब्दों में प्रकट की, "मैं अपने गुरुभाई द्रोण को अपना गुरु मानता हूं। जब मैं राज्यभार संभालूंगा तो अपने आधे राज्य का राजा इन्हें बनाऊंगा।"

गुरु भारद्वाज ने उसे एकांत में ले जाकर कहा, "ऐसी कोई बात नहीं कहनी चाहिए जो भविष्य के गर्भ में हो। क्या पता, उस समय कैसी परिस्थिति हो और तुम्हारी ही क्या इच्छा हो।

"इच्छा रखना एक बात है और संकल्प बहुत बड़ी चीज है। संकल्प लेते समय सौ बार सोचना चाहिए। जिस तरह धनुष से छूटा हुआ तीर वापस नहीं आता, उसी तरह लिया हुआ संकल्प सारे जीवन को बांध देता है।"



गुरु की इन बातों का उत्साही द्रुपद पर कोई प्रभाव न पड़ा।

समय रात-दिन के पंखों पर सवार होकर उड़ता गया।

द्रुपद अपनी शिक्षा समाप्त कर, गुरु भारद्वाज से आशीर्वाद लेकर, मित्र द्रोण से मिलता हुआ अपने पिता पांचाल नरेश के यहां लौट गया।

द्रोण ने अपने पिता के पास रहकर वेद-वेदान्तों का अध्ययन किया और उनसे धनुर्विद्या की शिक्षा भी ली। अपनी तीक्ष्ण बुद्धि के बल पर वे बड़े ही निपुण विद्वान और धनुर्धारी बने।

यथासमय ब्रह्मचर्याश्रम का काल समाप्त हुआ।

द्रोण अब गृहस्थ बने। उन्हें अपनी पत्नी पर बड़ा स्नेह था।

उन्हें एक प्यारा पुत्र भी हुआ, जिसका नाम उन्होंने अश्वत्थामा रखा।

पौत्र को थोड़े दिन गोद खिलाकर गुरु भारद्वाज स्वर्ग सिधारे।

आश्रम, जिसकी हालत पहले ही अच्छी नहीं थी, अब और भी ध्वस्त हो चुका था।

द्रोण को अपना परिवार चलाने में बड़ी कठिनाई होने लगी थी।

इसी समय उन्होंने सुना कि भगवान परशुराम अपनी संपत्ति गरीब ब्राह्मणों को बांट रहे हैं। वे भगवान परशुराम के पास पहुंचे। भगवान परशुराम तब तक अपनी सारी संपत्ति बांटकर वन में तप करने जाने की तैयारी में थे।

द्रोण की प्रार्थना सुनकर उन्होंने कहा, "ब्राह्मणश्रेष्ठ, आपका स्वागत है। मेरे पास तो जो कुछ था, मैं बांट चुका हूं। आप मेरे शरीर और धनुर्विद्या में से जो चाहें ले सकते हैं।"

द्रोण ने उनसे सारे शस्त्रों के प्रयोग और उसके रहस्य सिखाने की प्रार्थना की। परशुराम ने यह स्वीकार कर लिया।

कुछ दिन परशुराम के निकट रहकर द्रोण ने उनसे सारी विद्या सीख ली और वापस लौट आये।

विद्या से जीवन की सारी जरूरतें तो पूरी होती नहीं हैं। द्रोण भी बड़ी मुसीबत में पड़े।

द्रोण की पत्नी ने एक रात कहा, "सुना है, तुम्हारे सहपाठी मित्र द्रुपद अब पांचाल नरेश हैं। क्यों नहीं तुम अपने मित्र के पास जाते हो? वे तो तुम्हें देखते ही प्रेम से मिलेंगे और तुम्हारी कठिनाइयां दूर करेंगे।"

द्रोण को द्रुपद की याद आयी।

वे उत्साह में भरकर एक दिन पांचाल देश की ओर चल पड़े।

द्रोण जब द्रुपद के दरबार में पहुंचे, राजा द्रुपद तन्मय होकर राजनर्तकी का नृत्य देख रहे थे। नृत्य की समाप्ति के बाद द्रोण किसी तरह राजसिंहासन तक पहुंचे और उत्साह के साथ द्रुपद से बोले, "मित्र द्रुपद, मुझे पहचानते हो न? मैं तुम्हारा सहपाठी मित्र द्रोण हूं।"

ऐश्वर्य के मद में भूले द्रुपद को द्रोणाचार्य का आना अच्छा नहीं लगा और उस पर से मित्रता का दावा? यह तो उन्हें और भी बुरा लगा।

वे नाराज होकर बोले, "ब्राह्मण, तुम्हारा यह व्यवहार तो सज्जनों के लायक नहीं है। मुझे मित्र कहकर पुकारने का तुमने साहस कैसे किया? सिंहासन पर बैठे नरेश के साथ एक दरिद्र की मित्रता कैसे हो सकती है? तुम्हारी बुद्धि बड़ी कच्ची है। गरीब की अमीर से, मूर्ख की विद्वान से और कायर की वीर से क्या मित्रता हो सकती है? मित्रता तो बराबरीवालों के बीच होती है। जो किसी राज्य का राजा न हो, वह राजा का मित्र कभी नहीं हो सकता।"



द्रुपद ने वहां खड़े सैनिकों को इशारा किया और उन्होंने द्रोण को बाहर चलने का आदेश दिया।

द्रोण अपमान की आग में जल उठे। द्रुपद के इस व्यवहार से अपमानित होकर वे लौटे तो घर न जाकर अपने साले कृपाचार्य के यहां चले गये।

कृपाचार्य उन दिनों हस्तिनापुर के राजकुमारों को शिक्षा दिया करते थे।

एक दिन सभी राजकुमार, नगर के बाहर कहीं गेंद खेल रहे थे। अचानक उनकी गेंद उछलकर एक गहरे कुएं में जा गिरी।

राजकुमारों ने कुएं से गेंद निकालने



की कोशिश की तो राजकुमार युधिष्ठिर की अंगूठी भी कुएं में जा गिरी।

सभी राजकुमार अपनी-अपनी समझ से गेंद और अंगूठी निकालने की कोशिश कर रहे थे। एक आदमी बड़ी देर से उनकी परेशानी देख रहा था।

उसने कहा, "राजकुमारो, तुम क्षत्रिय हो। तीर चलाना भी जानते हो। क्या तब भी गेंद नहीं निकाल सकते?"

राजकुमारों में से एक ने कहा, "क्या बात करते हैं? भला, तीर-धनुष से गेंद कैसे निकलेगी?"

उस आदमी ने कहा, "मैं गेंद निकाल दूं तो तुम मुझे क्या दोगे?"

युधिष्ठिर ने तुरंत कहा, "अगर आप हमारी गेंद और अंगूठी निकाल देंगे तो हम अपने आचार्य कृपाचार्य के यहां आपको खूब अच्छी दावत देंगे।"

उस आदमी ने वहां पड़ी कुछ सींकें उठा लीं।

एक सींक को कुछ मंत्र पढ़कर उसने कुएं के पानी में फेंका। सींक जाकर सीधी गेंद में धंस गयी। उसने दूसरी सींक फेंकी तो वह पहली सींक के ऊपर चिपक गयी।

इसी प्रकार एक-के-बाद-एक सींकें

चिपकती चली गयीं। सबसे ऊपरवाली सींक पकड़कर उस आदमी ने गेंद बाहर निकाल ली।

एक राजकुमार से धनुष लेकर उस आदमी ने अंगूठी का निशाना लिया और बाण छोड़ा। बाण अंगूठी में जाकर लगा और अंगूठीसहित कुएं से बाहर आ गया।

सभी राजकुमार आश्चर्य से उस आदमी की ओर देखने लगे।

युधिष्ठिर ने तुरंत उस आदमी के पांव छुए, "महात्मन, आप हमें अपना परिचय दें।"

"अब तो दावत के समय, कृपाचार्य के यहां ही मेरा परिचय होगा।" वह आदमी हंसकर बोला।

राजकुमारों ने कहा, "ठीक है। हमलोग भी अपने दादाजी के साथ आपसे परिचय पायेंगे।" राजकुमारों ने अपने दादा पितामह भीष्म से इस आदमी की चर्चा की।

पितामह भीष्म ने कृपाचार्य के पास खबर भेजी और उनसे यह जानकर कि उनके यहां द्रोणाचार्य आये हैं, बड़े खुश हुए।

राजकुमारोंसहित भीष्म कृपाचार्य के यहां पहुंचे। उन्होंने द्रोण से प्रार्थना की कि वे राजकुमारों को आगे की शिक्षा देने की कृपा करें।

द्रोण आचार्य बनकर स्थायी रूप से हस्तिनापुर में रहने लगे।

गुरु द्रोण के प्रिय शिष्य थे अर्जुन। वे जो कुछ भी सिखाते, अर्जुन उसे तुरंत सीख लेते।

गुरु के सबसे करीब होने कारण अर्जुन को द्रोण के मन की परेशानी का पता चल गया।

द्रोण तो अपमान की आग में जल रहे थे। वे इन राजकुमारों को अपनी एक योजना के मुताबिक युद्ध-कौशल की शिक्षा दे रहे थे।

एक दिन अर्जुन ने गुरु से प्रार्थना की कि वे गुरुदक्षिणा मांगें।

अर्जुन की उस प्रार्थना को सुनकर आचार्य द्रोण की आंखों के सामने अपने अपमान की घटना नाच उठी।

उन्होंने राजकुमारों से कहा, "राजकुमारो, पांचालनरेश द्रुपद ने एक बार मेरा बड़ा अपमान किया है। वर्षों बीत गये पर मैं अभी तक उस अपमान को भूल नहीं सका हूं। मैं चाहता हूं कि



तुम लोग राजा द्रुपद को हराकर, उन्हें बन्दी बनाकर मेरे पास ले आओ। मेरे लिए तुम्हारी यही गुरु-दक्षिणा होगी।"

राजकुमारों ने पूरी तैयारी के साथ पांचाल देश पर हमला कर दिया।

पांचाल सैनिकों ने राजकुमारों का मुकाबला तो किया, पर अर्जुन की वीरता और निपुणता से त्रस्त होकर सारी पांचाल सेना भाग खड़ी हुई।

राजा द्रुपद अकेले पड़ गये। अर्जुन के सामने उनका सारा शस्त्र-कौशल फीका पड़ गया।

अर्जुन ने अपने भाई भीम को इशारा

किया और उसने द्रुपद को बंदी बना लिया।

द्रुपद गुरु द्रोण के पास लाये गये।

गुरु ने हंसकर उनसे पूछा, "क्यों पांचाल नरेश, अब तुम मुझे पहचानते हो या नहीं ?"

द्रुपद लज्जित हो गये। उनके मुंह से आवाज नहीं निकली।

"क्यों, तुम कुछ बोलते नहीं हो ?" द्रोण ने कहा, "अच्छा, अब मैं समझा। तुम तो बराबरीवालों से ही मित्रता रखते हो। बातचीत भी शायद राजाओं से ही करते होगे। उस दिन मैं अपनी मुसीबत में, मित्रता के नाते तुम्हारे पास गया था।

"कभी तुमने ही यह कहा था कि तुम मुझे अपना आधा राज देकर राजा बनाओगे। क्या तुम वह भूल गये ? आज तुम हारकर मेरे पास आये हो।

"मेरे शिष्य तो तुम्हारी हत्या भी कर सकते थे, पर मैंने इसके लिए मना कर दिया था। मैं तुम्हारे साथ समानता का सलूक करूंगा ताकि आगे से मित्रता में बाधा न हो। मैं तुम्हारा आधा राज लेकर तुम्हें आजाद करता हूं।"

गुरु द्रोण ने द्रुपद के बन्धन खुलवा दिए, और भोजन कराकर विदा किया।

राजा द्रुपद द्रोण के यहां से अपमानित होकर लौटे। उनका घमंड चूर-चूर हो चुका था।

द्रोण के साथ अपना बर्ताव तो वे कब का भूल गये थे, पर आज द्रोण ने जिस प्रकार उनका अपमान किया था, वह उनकी छाती पर पहाड़ जैसा लदा हुआ था।

द्रोण से बदला लेना ही द्रुपद के जीवन का लक्ष्य बन गया।

वे रात-दिन इसी चिंता में घुलने लगे। उन्होंने अपना राज्य मंत्रियों को सौंप दिया और खुद ऋषियों के आश्रमों में घूमने लगे ताकि कहीं से बदला लेने का रास्ता मिले।

एक ऋषि ने कहा, "तुम्हारे भाग्य में अपनी ताकत से द्रोण को हराना या उसकी कुछ भी हानि करना नहीं लिखा है। हां, यदि तुम ऐसा पुत्र प्राप्त कर लो तो यह संभव हो सकता है। ऐसे पुत्र के लिए यज्ञ कराने का सामर्थ्य एक ही ऋषि में है और वे हैं महर्षि याज। तुम यदि अपनी सेवा और दक्षिणा से उन्हें प्रसन्न कर लो तो तुम्हारी इच्छा पूरी हो सकती है।"

द्रुपद महर्षि याज के आश्रम में पहुंचे।

"मैं आपके पास पुत्र पाने के लिए यज्ञ कराने की प्रार्थना करने आया हूं। मुझे ऐसा लड़का चाहिए जो मेरे शत्रु का सिर उतार सके।"

"तुम हो कौन ?" महर्षि याज ने पूछा।

"मैं पांचालराज का पुत्र द्रुपद हूं। महर्षि भारद्वाज के पुत्र द्रोण ने अपने शिष्यों की मदद से मुझे हराकर, गंगा और यमुना के उत्तर का, पांचाल राज का हिस्सा मुझसे छीन लिया है। मैं द्रोण से बदला लेनेवाला एक लड़का चाहता हूं। क्या आप इसमें मेरी मदद करेंगे ?"

ऋषि बोले, "समझा। पर राजन, यह कोई साधारण काम नहीं है। द्रोण तो भारद्वाज ऋषि का पुत्र है। उसका सर उतारनेवाला वीर पैदा करना जरा मुश्किल काम है।"

द्रुपद याज के चरणों में गिर पड़े, "महाराज, आप मुझे निराश न करें अन्यथा मैं आत्महत्या कर लूंगा। आपको जो चाहिए, वह सब मैं आपको दूंगा। मैंने इस यज्ञ के लिए एक लाख गायों जितना धन देने की प्रतिज्ञा की है।"

ऋषि याज यज्ञ करने के लिए तैयार हो गये।

द्रुपद की राजधानी में यज्ञ की तैयारियां चलने लगीं।

एक बड़ा मंडप बनाया गया। उसके बीचोबीच एक यज्ञवेदी बनायी गयी।

याज मुनि ने द्रुपद और उनकी रानी को विधिपूर्वक स्नान, उपवास कराकर यज्ञ की शुरुआत की।

यज्ञ पूरे जोर-शोर के साथ चलने लगा। यज्ञ का धुंआ सारे नगर पर छाने लगा।

यज्ञ के पूरा होने का समय आ गया। राजा-रानी के साथ सारे अधिकारी मौजूद थे।

महर्षि याज आखिरी आहुति देने के लिए खड़े हुए। द्रुपद और रानी हाथ जोड़कर याज के सामने खड़े हो गये। याज ने मंत्रोच्चार के साथ होम दिया और यज्ञवेदी से घोड़े पर सवार एक तरुण बाहर आया। उसके कान में कुण्डल थे, शरीर पर कवच था और हाथ में शस्त्र थे।

याज उस युवक का हाथ द्रुपद के हाथ में देते हुए बोले, "लो, यह रहा तुम्हारा तेजस्वी बेटा ! इसका नाम धृष्टद्युम्न है। यह द्रोण का सिर उतारेगा।"



" यज्ञवेदी से एक तरुण बाहर आया ।"

युवक ने राजा-रानी के पांव छुए। रानी ने खुशी से उसे अपनी गोद में समेट लिया।

यज्ञ से ही राजा को द्रौपदी नाम की एक लड़की भी प्राप्त हुई।

समय बीता।

महाभारत का भयंकर युद्ध शुरू हुआ।

कुछ समय बाद कौरव सेना का नेतृत्व आचार्य द्रोण ने संभाला। वे अकेले ही हजार सैनिकों का बल रखते थे। उनके आक्रमण को झेलने में पांडवों को कठिनाई हो रही थी। द्रोण की मार से सब त्रस्त हो रहे थे।

रात को भीम, अर्जुन, युधिष्ठिर आदि श्रीकृष्ण के पास बैठकर विचार करने लगे कि आचार्य द्रोण पर किस प्रकार विजय मिल सकती है।

युधिष्ठिर ने कहा, "केशव, यह युद्ध तो भीम और अर्जुन ही लड़ रहे हैं। मैं तो शुरू से ही युद्ध नहीं चाहता था। अब आचार्य द्रोण के आक्रमण को न अर्जुन रोक पा रहे हैं, न भीम। हमारे पक्ष के कितने ही सिपाहियों को आचार्य रोज दिन मृत्युलोक में पहुंचा देते हैं। ये सिपाही अपने लिए नहीं, हमारे लिए लड़ते हैं और हमारे लिए ही मरते हैं।"

कृष्ण बोले, "राजन, युद्ध में उतार-चढ़ाव तो होता ही रहता है। कभी पितामह भीष्म ने भी तो हमें परेशान कर दिया था। अर्जुन या भीम सीधी लड़ाई में आचार्य को हरा नहीं सकते हैं।"

कृष्ण ने भीम से कहा, "भाई भीम, मेरी नारायणी सेना में अश्वत्थामा नामक एक बड़ा भयंकर हाथी है। कल सुबह तुम उसकी खोज में जाओ। वह जहां भी दिखाई दे, उस पर सवार सैनिक के साथ उसे मार डालो और तब जहां आचार्य द्रोण युद्ध कर रहे हों, वहां जाकर "अश्वत्थामा मारा गया" की घोषणा कर दो। मुझे लगता है कि यह समाचार सुनने के बाद बेटे की ओर ध्यान जाने के कारण आचार्य द्रोण में लड़ने की ताकत समाप्त हो जायेगी।"

भीम ने सारी बात समझ ली।

दूसरे दिन आचार्य द्रोण अपने रथ पर चढ़े, भयंकर लड़ाई में जुटे थे। इतने में पांडव-पक्ष के कुछ सैनिक चिल्लाते, आनन्द मनाते दौड़े आये कि भीम ने अश्वत्थामा को मार गिराया।

जिसने सुना वही हैरान रह गया।

आचार्य द्रोण की आंखों के सामने अंधेरा छा गया।

उनके हाथ ढीले पड़ गये "यह कौन कह रहा है ? अश्वत्थामा ऐसे मारा जायेगा ? यह झूठ है।"

तब तक दूसरी ओर से भीम रथ दौड़ाता हुआ आया और बोला, "मैंने अपनी गदा से अश्वत्थामा का सिर चूर-चूर कर दिया।"

द्रोण ने लड़ाई लड़नी बंद कर दी। उनकी आंखों में आंसू उमड़ आये।

उन्होंने भरे कंठ से कहा "युधिष्ठिर कहां हैं ? वे मुझे सच्ची खबर दें।"

युधिष्ठिर ने धीमी आवाज में कहा, "हां आचार्य, अश्वत्थामा सचमुच मारा गया," और फिर बहुत धीमी आवाज में बोले, "नर नहीं, हाथी।"

द्रोण ने दूसरी बात सुनी ही नहीं।

वे अपने रथ से उतर गये। सारे शस्त्र उतारकर फेंक दिए और वहीं, लड़ाई के मैदान में बैठ गये।

इसी समय द्रुपद का पुत्र धृष्टद्युम्न तलवार लेकर दौड़ता हुआ आया और एक ही झटके में उसने गुरु द्रोण का सर धड़ से अलग कर दिया।

अपमान और बदले की आग में, द्रुपद-द्रोण की दोस्ती जलकर राख हो गयी। ●

- सावित्री की कहानी
- संत मूलदास
- हज़रत राबिया बसरी
- मीरा
- सच्ची मित्रता
- दैत्य से देव
- गुरू गोविंद सिंह
- कौन जीता ?
- नटखट कृष्ण कन्हैया
- सच की जीत

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना १९३८ में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्प्रयत्नों से हुई थी। इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा बिकसित करने की रही है, जिसे ग्राम जनता ग्रासानी से समझ सके ग्रौर जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके। वह भाषा है हिन्दुस्तानी !

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान ग्रौर ग्रानन्द से भरी कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है: यह उसकी तीसरी किश्त है। इस सेट के हर किताब की कीमत दो रुपये होगी।

बच्चों की कहानियां

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बंबई-४००००२

